Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 15, Issue No. 12, December-2018, ISSN 2230-7540

भारत के संसदीय चुनाव में चुनाव खर्च की उभरती प्रवृतियाँ

Dr. Lal Kumar Sah*

Village-Marukiya, Post-Andhrathadhi, District-Madhubani, Pin Code: 847401, Bihar

सार – *भारतीय लोकतंत्र विश्व का सबसे बड़ा प्रजातांत्रिक ढ़ाँचा है। आजादी के बाद अब तक हुए संसदीय चुनावों ने देश की जनता को प्रौढ़ बना दिया है। समय-समय पर होने वाली चुनावों में यहाँ के मतदाताओं ने अपनी सक्रिय भागीदारी देकर यह साबित कर दिया है कि यहाँ के मतदाता सामान्यतः सोंच-विचार कर ही मताधिकार का प्रयोग करते है। किंतु दुर्भाग्यवश लोकतंत्र का यह महान पर्व आज अर्थतंत्र द्वारा बुरी तरह प्रभावित है। चुनाव में, खासकर संसदीय चुनाव में एक साधारण व्यक्ति को अपनी उम्मीदवारी देना उसकी वश की बात नहीं रह गयी है। पैसे का जिस प्रकार नंगा प्रदर्शन होता है उसमे साधारण व्यक्ति का टिक पाना कठिन है। चुनाव में जीतना कम समय में धन कमाने का सर्वश्रेष्ठ व्यवसाय बन गया है। हर चुनाव के बाद आपराधिक पृष्ठभूमि के सांसदों और विधायकों की संख्या बढ़ती जा रही है।1 पार्टिया पुनः सत्ता में आने के लिए ऐसे लोगों को टिकट देती है, जो सत्ता-लालसा में कुछ भी करने को तैयार होते है।*

----------X----------

परिचयः-

एक सच यह भी है कि 'व्हिप' (चाबुक) के माध्यम से संसद में वोट देने का कंट्रोल पार्टी के एक या दो शीर्ष नेताओं के हाथ में ही रहता है। यानी संसद द्वारा बनाये गये कानून, जो पूरे देश पर लागू होते है, सिर्फ 8-10 नेताओं द्वारा तय किये जाते है। आज की ज्यादातर राजनीतिक पार्टियों में कोई अंदरूनी 'डेमोक्रेसी' नही है, एक और बड़ा सबाल है चुनाव लड़ने के लिए अपार खर्च करने की बन गयी अनिवार्यता। यह एक खुला सच है कि चुनाव में खर्च की गयी वास्तविक लागत और चुनाव आयोग द्वारा निर्धारित चुनाव खर्च की सीमा में जमीन-आसमान का फर्क है। यानी कानून बनानेवाले सांसद सरासर झूठे हिसाब बना कर कानून तोड़ते हैं, तो फिर अचरज नहीं कि वे अपने संसद काल में क्या कुछ करते हैं।

चुनाव हमारे प्रजातंत्र और सत्ता का मूल स्रोत है और इसमें रचनात्मक सुधार लाये बिना व्यापक रूप से फैले भ्रष्टाचार को नहीं रोका जा सकता। चुनाव प्रक्रिया में परिवर्तन के मुख्य बिंदु-

1. ऐसी कानूनी व्यवस्था बनाना जिसके मुताबिक अपराधी और दबंग किस्म के लोग किसी भी तरह से चुनाव न लड़ सकें।
2. ऐसा कानून बनाना, जिससे सामाजिक सेवा भाव करनेवाले प्रतिष्ठित लोग, जो चुनावों में खड़े होना चाहे, चुनाव जीत सकें।
3. चुनाव लड़ने और चुनाव प्रचार से संबंधित अनेक आर्थिक खर्चों, श्रम और समय को कम करने की व्यवस्था बनाना।
4. उपलब्ध तकनीकी साधनों की समीक्षा और उपयोग करना, जो उपरोक्त बिंदु तीन को सफल बनाने के लिए आवश्यक है।
5. हमारे देश में चैदह सौ रजिस्टर्ड राजनैतिक पार्टियां हैं, इन पार्टियों के अस्तित्व का क्या मकसद है और क्यों इनका रजिस्ट्रेशन रद्द करने का अधिकार चुनाव-आयोग के पास नहीं है।
6. चुनाव आयोग द्वारा रजिस्ट्रेशन का कानून 1969 में बना और उसके बाद से इसमें कोई संशोधन नहीं किया गया है। सवाल है कि निर्वाचन आयोग इस विषय में क्या कर सकता है और अब तक विषय में क्या किया गया है।2

www.ignited.in

इस बात को समझना भी आवश्यक है कि पिछले अनेक वर्ष में चुनाव-आयोग, प्रख्यात देशबासियों और सरकार की अपनी कमेटियों ने भी चुनाव कानूनों के विषय बहुत सी अच्छी सलाहें दी थी, लेकिन तत्कालीन सरकारों में से किसी ने भी इन सलाहों पर कोई कार्रवाई नहीं की। शायद केवल इसलिए कि वर्तमान कानूनों के चलते रहने में ही उच्च अधिकारी वर्ग और राजनीतिक नेताओं का स्वार्थ निहित था। यह भी देखना आवश्यक है कि अधिकतर वर्तमान कानून आदि तभी बदले जाते है, जब गैर राजनीतिक आम लोग दबाव बनाते है। निर्भया के रेप में भी जब विद्यार्थियों ने जोरदार रूप से प्रदर्शन किया तभी सरकार सात दिनों में चार्जशीट दाखिल करने (पुलिस इस काम के लिए दो महीना चाहती थी), और 'फास्ट ट्रैक कोर्ट' द्वारा इस मुकदमें का फैसला करवाना तय किया था। लोकपाल बनाये जाने का मामला (चाहे जिस किसी भी रूप् में वह बनाया गया) भी अन्ना हजारे के आंदोलन के कारण ही तय हुआ था।

उरोक्त परिदृश्य में यह आवश्यक है कि गैर-राजनीतिक नागरिक समूह बनाये जायें, जो समय-समय पर चुनाव पर चुनाव-प्रणाली सुधारों की अत्यावश्यकता पर पक्के सुझाव बनायें, और फिर इन पर उचित कानून बनाने के लिए नागरिक दबाव बनायें। नागरिक समूहों द्वारा बनायें सुझाव उचित सोच-विचार और तर्कशीलता पर आधारित होने चाहिए। सदा यह उचित उद्देश्य होना चाहिए कि नागरिक समूह अधिकारी वर्ग, चुनाव-आयोग और राजनीतिक नेताओं से लगातार सौहादपूर्ण संपर्क बनाये रखें, जिससे कि परिवर्तन के लिए उचित कानून बनें।

पहले राजनेता अपनी ईमान्दारी, सादगी जनसेवा तथा समाज के प्रति समर्पण के बल पर चुनाव लड़ते थे एवं बिना आर्थिक बोझ उठाये चुनाव जीत जाते थे, उदाहरण के तौर पर दरभंगा संसदीय क्षेत्र से तीन अति सामान्य व्यक्ति हरी नारायण दास, सुरेन्द्र झा 'सुमन', भोगेन्द्र झा (मधुबनी) अपने व्यक्तित्व एवं कार्य निष्ठा के आधार पर संसद में प्रवेश पाये थे जबकि दरभंगा राज के महाराजाधिराज कामेश्वर सिंह चुनाव हारे थें। चुनाव में धन का बोलबाला 70 के दशक के बाद जोड़ पकड़ने लगा। राजनीतिक दलों ने भी उन्हें ही टिकट देना प्रारंभ किया जो पार्टी फंड में धन देने का सामर्थ रखते हैं और चुनावी समर में हर प्रकार के हथकण्डा को जुटापाने में सफल होते हैं। ऐसी स्थिति में एक साधारण व्यक्ति को चुनाव लड़ना अब संभव नही रह गया है। ऐसी स्थिति एक दल में ही नहीं है अपितु कमोवेश हर दल में दिखाई देता है। भले ही कुछ इसका अपवाद ही क्यों न हो? चुनाव में धन का प्रदर्शन करने के कई तरीके दिखाई देते है जिसमें कुछ तो प्रत्यक्ष होते हैं एवं कुछ अप्रत्यक्ष/प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाले खर्चों में जमानत की राशि, मददाता सूची, नामांकन खर्च, वाहन खर्च, पोस्टर, बैनर, लाउडस्पीकर, बैच, कार्यकर्ताओं के भोजनादि आदि आते है। जबकि अप्रत्यक्ष खर्च में बुथ व्यवस्था, उपहार में दिए जाने वाली वस्तु, नगद राशि वितरण आदि आते हैं।3 मतदाताओं को आकृष्ट करने के लिए मोटी रकम बाँटी जाती है जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव चुनाव के दौरान उम्मीदवारों के वाहनों से बरामद की जाने वाली करोड़ो की राशि हैं। ये रूपये काले धन के होते हैं जो बिना लेखा-जोखा के खर्च किये जाते हैं। कुछ धन तो उम्मीदवार स्वयं जुटाते हैं जबकि अधिकांश राशि लाभ कि उम्मीद रखने वाले लोग, जिसमें मुख्य रूप से कारपोरेट एवं व्यावसायीक संस्थाओं द्वारा उपलब्ध कराने वाले होते है। जो चुनाव जितने या सरकार बनाने की स्थिति में इसका भरपुर लाभ उठाने में कोई कसर नही छोड़ते है। इसके कई प्रमाण हमें समाचार पत्रों, दुरदर्शन एवं संसद में होने वाली कार्यवाहियों से प्राप्त होता है।

चुनाव आचार संहिता के तहत उम्मीदवारों को उन सारी क्रियाओं को करने की मनाही होती है जो भ्रष्ट आचरण के तहत आती है किंतु इसके बाद भी यह क्रिया अनवरत चलती आ रही है। चुनावी खर्च के उचित प्रबंधन के लिए देश में कई बार प्रयास किये गये है। सर्वप्रथम 1972 में स्टेट फण्डिंग की बात संयुक्त संसदीय समिति में उठायी गई थी जिसके सदस्य अटल बिहारी बाजपेयी एवं लालकृष्ण आडवानी जैसे सांसद थे। 1990 में बी.पी.सिंह की सरकार ने एक समिति का गठन किया जिसके अध्यक्ष तत्कालीन कानुन मंत्री दिनेश गोस्वामी बनाये गये थे। पुनः 1998 में सी.पी.आई. के नेता इन्द्रजीत गुप्ता के अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया जिसमें डॉ. मनमोहन सिंह और सोमनाथ चटर्जी सदस्य बनाये गये। गुप्ता समिति ने प्रति मतदाता 10 रूपया खर्च को ध्यान में रखकर "स्टेट फण्ड" के निमार्ण के लिए अनुसंशा की जिसमें केन्द्र और राज्य सरकार को मिलकर 600 करोड़ की व्यवस्था करनी थी। कमिटि ने इस बात की भी अंनुसंसा की की स्टेट फंडिंग के द्वारा राजनीतिक दलों को दी जाने वाली सुविधा नगद में न होकर समाग्री के रूप में दी जाय। धन की व्यवस्था के लिए गुप्ता समिति ने कॉर्पोरेट सेक्टर के अधिक लाभ पर उपकर लगाने कि अनुसंशा की तथा दुसरे सुझावों के रूप में एम.पी.एल.डी.ए. के लिए आवंटित राशि का 50 प्रतिशत उपयोग चुनावी खर्च को पुरा करने के लिए कहा गया जिससे 1580 करोड़ रूपये कि प्राप्ति होती किंतु कई समितियों के गठन के बावजुद अबतक इस दिशा में कोई सफलता प्राप्त नही हो सकी है।4

अमेरिका, ब्रिटेन तथा जर्मनी जैसे प्रजातांत्रिक रूप से विकसित देशों में चुनाव के लिए सार्वजनिक कोषो के निमार्ण हेतु कानुन बनाये गये है। अमेरीका ने तो 1976 में 400 करोड़ रूपया से ऐसे फंड का निर्माण किया। जिसमें राष्ट्रपति का चुनावी खर्च

भी सम्मिलित था। ब्रिटेन में भी ऐसी व्यवस्था बनाई गयी है। किंतु भारत में जहाँ लोकतांत्रिक व्यवस्था में भाग लेने का अधिकार यहाँ के हर नागरीक को प्राप्त है। ऐसे फंड का अभाव हैं। चूंकि चुनाव में बढ़ते खर्च और अपनाये जाने वाले गलत हथकंडों के कारण आम नागरीको के लिए उम्मीदवारी दे पाना कठिन हो गया है अतएव इसका एक मात्र निदान चुनावी खर्च पर अंकुश लगाना तथा सरकार द्वारा चुनाव कोष का निर्माण किया जाना हो सकता है।5

निष्कर्षः-

हम सौभाग्यशाली है कि देश की चुनाव प्रक्रिया ही कार्यकारी राजनीतिक शक्ति का एक मात्र मार्ग है। हाल के साफ-सुथरे चुनावी परिणाम इसका सबूत है। हालांकि, चुनावी-प्रक्रिया में अनेक सुधारों के बावजूद आज भी आम जनता की राय में चुनावी प्रक्रिया देश की मूल खराबियों का मुख्य कारण है, जैसे कि सरकारी खजाने की चोरी, कालेधन की अपार महत्ता आदि। इन सब से जनता का चुनावी पद्धति और व्यवस्था में विश्वास घटता है। दो वर्ष पहले पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त लिंगदोह ने कहा था, 'हमारी चुनावी-प्रक्रिया हमारे राजकोषीय कोष की एक खुली और व्यापक लूट है।' स्पष्ट है कि चुनावी प्रक्रिया में संरचनात्मक सुधार आवश्यक है, लेकिन स्वार्थ में नेता इस बात से कन्नी काटते है।

संदर्भ स्रोतः-

1. प्रो0 विपन चन्द्रा, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृष्ठ 14

2. डॉ. सुशील माधव पाठक, भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पृष्ठ 21

3. मित्रा एवं सिंह, भारत की चुनावी राजनीति के बदलते आयाम, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी-2006. पृ. 88.

4. 'ए.पी. वर्मा, स्टडी ऑफ़ मिड टर्म इलेक्शन इन बिहार', गोपी प्रकाशन, पटना, 1967. पृ. 12-13.

5. डॉ. फखराज जैन, भारतीय राज-व्यवस्था, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2002, पृष्ठ 270-276

Corresponding Author

Dr. Lal Kumar Sah*

Village-Marukiya, Post-Andhrathadhi, District-Madhubani, Pin Code: 847401, Bihar

www.ignited.in